शीर्षकः दलित विकास कल्याण नीतियॉ एवं संवैधानिक प्रावधान

डॉ0 हरिश्चंद्र मिश्र सहायक प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, डीएसबी परिसर, कुमाऊं विश्वविद्यालय, नैनीताल

घोषणा प्रमाणपत्र– मैं, डॉ0 हरिश्चंद्र मिश्र घोषणा करता हूं कि ''दलित विकास कल्याण नीतियॉ एवं संवैधानिक प्रावधान'' शीर्षक पर यह शोध आलेख/पेपर एक मौलिक कार्य है और अभी तक प्रकाशन के लिए किसी अन्य जर्नल में प्रस्तुत नहीं किया गया है।

शीर्षकः दलित विकास कल्याण नीतियॉ एवं संवैधानिक प्रावधान

डॉ0 हरिश्चंद्र मिश्र

साराशः

भारत में स्वंतत्रता के बाद समाज में दलित जाति में व्याप्त भेदभाव, शोषण, कुरीतियों को भारतीय संवैधानिक प्रावधानों से रोकने की कोशिश की गयी। जाति व्यवस्था से उत्पन्न कुरीतियों को कानून लागू कर प्रतिबंधित किया गया। इस प्रकार धीरे–धीरे दलितों की स्थिति में सुधार की प्रक्रिया चल पड़ी। कुछ विशेष संवैधानिक प्रावधानों जैसे की आरक्षण व्यवस्था एवं विभिन्न विकास कार्यक्रमों से दलितों की स्थिति में सुधार होने लगा है। अब तक दलितों पर किये गये कई अध्ययनों से पता चलता है की दलित कल्याण एवं विकास की नीतियों का लाभ दलित लोगों को मिल पाया है। आरक्षण की मूल भावना दलितों–शोषितों को सामाजिक न्याय और अवसर प्रदान करना है, ताकि लोकतांत्रिक मूल्य सार्थक हो और राष्ट्र की विकास प्रक्रिया में प्रत्येक नागरिक की सहभागिता सुनिश्चित हो सके। इस गुणात्मक शोध पत्र मे दलितों में जाति–अनुसूचित जाति का मुद्दा, दलित संबंधी संवैधानिक प्रावधान एवं मुख्य विकास नीतियां एवं कार्यक्रम समस्या का कथन, साहित्य समीक्षा, अध्ययन के उद्देश्य एवं शोध प्रणाली का विवरण दिया गया है।

मुख्य शब्दः

जाति व्यवस्था, अनुसूचित जाति, दलित, विकास नीतियां, संवैधानिक प्रावधान

परिचयः

सदियों से भारतीय समाज में व्याप्त जाति व्यवस्था के कारण दलित जाति मानवीय अधिकारों से वंचित रहा है जिसके कारण समाज के अन्य वर्गों के समानांतर उसकी सामाजिक–आर्थिक राजनीतिक स्थिति निम्न स्तर की रही है। भारतीय समाज की संरचना एवं मूल्यों में कुछ परिवर्तन अंग्रेजों के शासन काल में शुरू हुयी। भारत मे स्वंतत्रता के बाद समाज में व्याप्त भेदभाव, शोषण, कुरीतियों को भारतीय संवैधानिक प्रावधानों से रोकने की कोशिश की गयी। जाति व्यवस्था से उत्पन्न कुरीतियों को

कानून लागू कर प्रतिबंधित किया गया। इस प्रकार धीरे–धीरे दलितों की स्थिति में सुधार की प्रक्रिया चल पड़ी। कुछ विशेष संवैधानिक प्रावधानों जैसे की आरक्षण व्यवस्था एवं विभिन्न विकास कार्यक्रमों से दलितों की स्थिति में सुधार होने लगा है। अब तक दलितों पर किये गये कई अध्ययनों से यह पता चलता है की दलित कल्याण एवं विकास की नीतियों का लाभ दलितों के बहुत छोटे भाग के लोगों को मिल पाया है। आरक्षण की मूल भावना दलितों–शोषितों को सामाजिक न्याय और अवसर प्रदान करना है, ताकि लोकतांत्रिक मूल्य सार्थक हो और राष्ट्र की विकास प्रक्रिया में प्रत्येक नागरिक की सहभागिता सुनिश्चित हो सके।

दलित जाति/वर्ग की अवधारणाः

1880 के दशक के अंत में मराठी शब्द दलित का प्रयोग महात्मा जोतिबा फुले द्वारा हिंदू समाज में उत्पीड़ित और टूटी हुई अछूत जातियों के लिए किया गया था। दलित या पीड़ित कोई नया शब्द नहीं है. जाहिर तौर पर इसका प्रयोग 1930 के दशक में दलित वर्गों के हिंदी और मराठी अनुवाद के रूप में किया गया था। फिर अंग्रेजों ने जिन्हें अब अनुसूचित जाति कहा जाता है उनके लिए भारत सरकार अधिनियम 1935 में अनुसूचित जाति शब्द का प्रयोग किया गया इस शब्द का प्रयोग बी.आर.अम्बेडकर ने भी 1948 में प्रकाशित द अनटचेबल्स में अपने मराठी भाषण में किया था। अंग्रेजी अनुवाद में दलित का मतलब ब्रोकन मैन है। 1930 के दशक की शुरुआत में एम.के. गांधी जी ने अछूत दलित जातियों के लिए हरिजन नामक शब्द का प्रयोग किया। समाज के एक विशेष वर्ग दलितों को दो तरह से देखा जाता है। भारतीय समाज के वर्ग विश्लेषण का उपयोग करने वाले लोग दलितों को किसान, खेतिहर मजदूर, फैक्ट्री श्रमिक, छात्र और इसी तरह की वर्ग या व्यावसायिक श्रेणियों में शामिल करते हैं। जाति के सांप्रदायिक विश्लेषण का उपयोग करने वालों के लिए, दलित हिंदू समाज के वे लोग हैं जो उन जातियों से संबंधित हैं जिन्हें हिंदू धर्म वंशानुगत व्यवसायों के कारण प्रदूषित करने वाला मानता है।

जाति व्यवस्था सामाजिक संबंधों एवं सामाजिक स्तरीकरण के निर्धारण हेतु भारतीय सामाजिक व्यवस्थाका एक मुख्य आधार है, जो सामाजिक विभाजन का एक

विशिष्ट रूप है जिसमें संपूर्ण समाज को परस्पर उच्च, मध्यम एवं निम्न वर्गों श्रेणियां में विभाजित किया गया है। इसमें उच्च, मध्यम और निम्न जाति के मध्य ऊंच–नीच का भेद–भाव पाया जाता है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति व्यवस्था के ऐतिहासिक विकास में जो जाति निम्न स्तरध संस्तरण पर होती है उसे दलित, अस्पृश्य, अनुसूचित जाति, हरिजन, चांडाल, अवर्णा, अछूत, नामसूद् परिहास, आदि दृ विण, आदिधर्मी एवं दबे–कुचले शोषित पीड़ित आदि नामों से उल्लेखित किया गया है। समाजशास्त्रीय लेखन में अनुसूचित जातियों को दलित जातियों के नाम से उल्लेखित किया गया है । विवेक कुमार के अनुसार दलित शब्द दलित पैंथर आंदोलन 1970 में महाराष्ट्र में विकसित हुआ था, इसमें विभिन्न प्रकार की निम्न जातियों (Lower castes) ने भाग लिया था। (विवेक कुमार, 2005)। जातियों में स्तर/ संस्तरण पवित्रता एवं अपवित्रता के सिद्धांतों पर आधारित हिंदू समाज में अत्यंत कठोर व्यवस्था के रूप में स्थापित है जिसके कारण निम्न जातियों पर अनेक सामाजिक–सांस्कृतिक विषमताओं का प्रत्यारोपण हुआ परिणाम स्वरुप इन जातियों को अनेक सामाजिक धार्मिक प्रतिबंधों का भी सामना करना पड़ा सामाजिक व्यवस्था में अनुसूचित जाति के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण का अभाव था स्वतंत्रता से पूर्व अनुसूचित जातियों की समस्याओं के निवारण हेतु हरिजन सेवक संघ, प्रार्थना समाज, ब्रह्म समाज, आर्य समाज ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। स्वतंत्रता के पश्चात संविधान में निम्न जातियों या दलित जातियों के संरक्षण के लिए विशेष प्रावधान किए गए साथ ही अनुसूचित जातियों के उत्थान के लिए विकास कार्यक्रमों में प्राथमिकता के आधार पर विशिष्ट प्रयास किए गए दलित बाहुल्य गांवों को अंबेडकर गांव के रूप में तथा विकास कार्यों के लिए भी विशेष श्रेणी में रखा गया।

साहित्य समीक्षाः

जी.एस.घुर्ये (1932) ने अपनी पुस्तक "जाति वर्ग और व्यवसाय "में जाति के छः लक्षणों का उल्लेख किया हैरू समाज का खण्डात्मक विभाजन, संस्तरण, खान–पान और सामाजिक सहवास पर प्रतिबन्ध, धार्मिक निर्योग्ताए तथा विशेषाधिकार, स्वतंत्र व्यसाय के चयन पर प्रतिबन्ध, विवाह पर प्रतिबन्ध। केतकर के अनुसार (1979) जाति

को समाजिक समूह के रूप में दो विशेषताए है- जन्म पे आधारित सदस्यता तथा वैवाहिक प्रतिबंध। ब्रेते (1965) ने वेबरियन विचारधारा के आधार पर जाति को हिन्दू समाजिक व्यवस्था में समूह प्रस्थिति के रूप में देखा है। सिंह (1986) ने जाति व्यवस्था के संरचनात्मक स्वरूप को दो भागो में बाट है– पहला खण्डयुक्त और दुसरा संगठित के रूप में। खण्डयुक्त यर्थाथता का अर्थ है की जैसे की एक जाति दुसरे जाति से घृणात्मक सामाजिक दूरी और सामाजिक असमानता के आधार पर अलग होती है लेकिन संगठित व्यवस्था के रूप में जातियां जजमानी व्यवस्था में एक दूसरे के साथ पारस्परिक भाव से जुड़ी हुई है।

के.एल.शर्मा (2004) भारतीय ग्रामीण समाज में जाति व्यवस्था आज भी स्तरीकरण का सर्वप्रथम आधार है। तथा यहाँ आज भी सम्पूर्ण समाज जातिगत उच्चता एवं निम्नता के आधार पर विभाजित है, व्यक्ति की स्थिति की निर्धारण उसके जन्म के द्वारा होता है। इस व्यवस्था में प्रत्येक स्तर पर व्यक्ति को जन्म के आधार पर ही समूह की सदस्यता, सामाजिक प्रस्थिति तथा अधिकार प्राप्त है। शर्मा ने अपने अध्ययन में एक ही जाति में ही वर्ग (आर्थिक) के आधार पर विभाजन (class in caste) तथा वर्ग (आर्थिक आधार पर) में ही कई जातियों (caste in class) की उपस्थिति की चर्चा की है यानी किसी विशेष उच्च जाति में सभी लोगों की स्थिति वर्ग (आर्थिक) के आधार पर सामान नहीं पाया जाता है। साथ ही, विभिन्न जातियों के लोग आर्थिक आधार पर एक ही वर्ग में आते हैं।

आंद्रे बेते ने स्पष्ट किया है कि पारंपरिक भारतीय समाज में एक समूह के जाति, वर्ग तथा शक्ति की प्रस्थिति में एकरूपता (congruity) थी। मगर विशेषकर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, विकास एवं परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उस एकरूपता में काफी बदलाव आया है। अब उच्च एवं मध्यम प्रस्थिति की जातियों में प्रस्थिति विभिन्नता आते जा रहा है।

दीपांकर गुप्ता (1991), भारत में सामाजिक स्तरीकरण में जाति के अतिरिक्त अन्य तत्वों जैसे सोपान और विभेद पर आधारित आयमो को प्राथमिकता दी है। अब तक

के चले आ रहे जाति विश्लेषण में पहली बार उन्होंने जाति में व्यक्ति को ढूंढ़ने का प्रयास किया, तथा व्यक्ति को ही सामाजिक गतिशीलता में कारक माना है।

वेबर के सामाजिक स्तरीकरण में वर्ग, प्रस्थिति समूह और शक्ति को आधार मानते हुए आंद्रे बेते ने भारतीय समाज में जाति, वर्ग और शक्ति को समझने की कोशिश की है। आंद्रे बेते (1965) ने श्रीपुरम गाँव के अध्ययन में गैर ब्राह्मण वर्ग में आदि द्रविण जो की संख्या बाहुल्य होने से राजनीतिक अवसरों का लाभ उठाकर सत्ता पर काबिज है। वे शिक्षा के अवसरों का लाभ उठाकर सरकारी पदों पर बने हुए है और अन्य जातियों से अपने आपको श्रेष्ठ मानते है और गैर जाति के लोग भी उन्हें सम्मान देते है। यह पारंमपरिक मिथक को तोड़ रहा है, जिसमें एक नया जाति वर्ग–सत्ता और शक्ति के रूप में उभर रहा है। यह सामाजिक स्तरीकरण के नये आयाम को प्रदर्शित करता है।

दलितों पर किये गए अध्ययनों से मुख्यतः कुछ बिन्दु उभरते हैः i) अधिकांश अध्ययनों में केवल, संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी कार्यक्रमों, शिक्षा और रिजर्वेशन पर ही बात की गयी है। ii) सामाजिक–आर्थिक परिपेक्ष्य में सरकारी नीतियों का गहन मूल्यांकनात्मक किया गया है। iii) दलितों में 'मध्यम–वर्ग', दलित अभिजन, दलित पूंजीपति आदि की बात की गयी है। iv) समकालिक दलितों से सम्बंधित मुद्दे जैसे की दलितों मे आरक्षण और दलित वर्ग के विकास के लिए विशेष प्रावधानों पर गहन अध्ययन किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य

i) दलितों में संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी कार्यक्रमों, शिक्षा और रिजर्वेशन का वर्णन एवं विश्लेषण करना,

ii) स्वतत्रंता प्राप्ति के बाद दलित वर्गों में संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों को ज्ञात करना, तथा

iii) पिछड़े हुए दलितों के विकास के लिए उपयुक्त तरीके एवं नीति सम्बन्धी सुझाव देना।

शोध प्रारूप और अध्ययन का समग्रः

प्रस्तुत अध्ययन का शोध प्रारूप वर्णनात्मक है। इसमें दलितों में विकास में वर्गों में संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों को ज्ञात करना, और उनके विकास के लिए सुझावों का वर्णन एवं विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोत से तथ्यों के संग्रह शोध–विषय से सम्बन्धित प्रासंगिक पुस्तकें, शोध पत्रिकाओं में लेख, समाचार पत्र रिपोर्ट, सरकारी दस्तावेज और वेबसाइटों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक स्त्रोतों से तथ्यों के संग्रह हेतु साक्षात्कार निर्देशिका का प्रयोग किया गया हैं।

अनुसूचित जातियों के लिए संवैधानिक उपबन्ध एवं संरक्षण

भारत सरकार द्वारा दलितों की निर्योग्यताओं को समाप्त करने तथा विकास के लिए तीन तरह के प्रयास किये गये हैं: संवैधानिक उपबन्ध, वैधानिक उपबन्ध।

(1) संवैधानिक उपबन्ध

अनुसूचित जातियों के लिए संविधान में निम्नलिखित प्रावधानों की व्यवस्था की गयी है– **अनुच्छेद 15:** राज्य किसी प्रान्त के नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान अथवा इनमें से किसी के स्थान पर विभेद नहीं करेगा और उपर्युक्त लिंग सम्बन्धित किसी को किसी स्थान पर कोई नागरिक दुकानों, भोजनालयों तथा होटलों और सामाजिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश के बारे में किसी की भी निर्योग्यता इस शर्त के अधीन न होगा। **अनुच्छेद 16:** राज्य के समस्त नौकरियों एवं पदों पर सबका सम्पूर्ण अधिकार होगा, साथ ही साथ पिछड़े वर्ग के

संरक्षण में कोई बाधा नहीं होगी। **अनुच्छेद 17:** इसके अनुसार अस्पृश्यता का अन्त किया गया है तथा उसका किसी भी प्रकार से आचरण करना उचित नही है। अश्पृश्यता से उत्पन्न किसी भी निर्योग्यता को लागू करना अपराध है। जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा। **अनुच्छेद 19:** जाति–पाति का विचार किये बिना सबको अपनी स्वेच्छा से व्यवसाय में लगने का समान एवं पूर्ण अधिकार है। **अनुच्छेद 23:** धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर किसी मनुष्य का व्यापार तथा उससे बलात श्रम (बेगार) लेना कानून के अनुसार दण्डनीय है। **अनुच्छेद 24:** इस अनुच्छेद में प्रावधान किया गया है कि चौदह वर्ष से कम आयु के बालकों को किसी कारखानों, खानों, में काम करने के लिए या अत्यन्त खतरनाक नियोजन में नहीं लगाया जा सकता। बालश्रम को रोकने के लिए केन्द्रीय या राज्य कानून है यह अनुच्छेद अनुसूचित जाति के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि खतरनाक नियोजन में लगे बाल श्रमिकों का काफी बड़ा भाग अनुसूचित जाति का है। **अनुच्छेद 25:** राज्य प्रशासन को यह अधिकार है कि वह हिन्दूओं की सार्वजनिक धार्मिक संस्थाओं को सभी वर्गो के लिए सुलभ कर दें। **अनुच्छेद 29:** राज्य निधि द्वारा पोषित अथवा सहायता प्राप्त किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, प्रजाति, जाति, भाषा अथवा इनमें से किसी के आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता है। **अनुच्छेद 38:** राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की भरसक कार्य साधने के रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक कल्याण की उन्नति का प्रयास करेगा जिससे सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करे। **अनुच्छेद 46:** राज्य जनता के दुर्बल विभागों विशेषतया अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा तथा सामाजिक अन्याय व सब प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करेगा। **अनुच्छेद 164 एवं 338:** अनुसूचित जातियों के कल्याण एवं सुरक्षा के प्रयोजन से राज्यों में सलाहकार परिषदों एवं पृथक विभागों की स्थापना तथा केन्द्र में एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान बनाया गया। **अनुच्छेद 330, 332, 334:** अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को संसद, राजकीय विधान

मण्डलों व पंचायतों में विशेष प्रतिनिधित्व की सुविधा की गयी है। **अनुच्छेद 335:** सरकारी नौकरियों में इनकी नियुक्ति के हितों का ध्यान रखना सरकार का कर्तव्य है। अतः इनके लिए स्थान सुरक्षित किया गया है। **अनुच्छेद 340:** राष्ट्रपति को अनुसूचित जातियों, जनजातियों, एवं पिछड़े वर्गों की सामाजिक, आर्थिक दशाओं के अध्ययन एवं संवर्द्धन हेतु आयोग गठित करने का अधिकार दिया गया है। **अनुच्छेद 341:** राष्ट्रपति सम्बन्धित राज्य के राज्यपाल से परामर्श के आधार पर किसी जाति को अनुसूचित जाति की श्रेणी में शामिल कर सकता है।

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोगः अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए, 1992 में एक राष्ट्रीय आयोग का गठन किया गया। जिसका मुख्य कार्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच और निगरानी करना, उनके लिए सामाजिक–आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और सलाह देना है। साथ ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के कल्याण, विकास और उन्नति के लिए ऐसी रिपोर्ट/सफारिशें बनाना जिससे कि संघ या राज्यों द्वारा सुरक्षा उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए बाध्य हो।

(2) वैधानिक उपबन्ध

अनुसूचित जातियों की समाजिक स्थिति में सुधार के लिए केन्द्र सरकार ने कई अधिनियमों को बनाया है। अनुसूचित जातियों की सबसे बड़ी समस्या है अस्पृश्यता। अतः भारत सरकार ने सर्वप्रथम ''अस्पृश्यता अपराध अधिनियम 1955 पारित किया।''

1–अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम 1955 को अधिक व्यापक बनाने एवं इसकी दण्ड व्यवस्था को प्रभावशाली बनाने के लिए इसमें 1976 में कुछ संशोधन किये गये। नये अधिनियम का नाम ''नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955'' रखा गया। संशोधित अधिनियम भारत के प्रत्येक भाग में 19 नवम्बर 1976 को लागू किया गया, जिसमें भिन्न–भिन्न अपराधों के लिए दण्ड निश्चित किये गये, जो इस प्रकार हैं: धारा 3– इस धारा में अस्पृश्यता के आधार पर सार्वजनिक पूजा के स्थानों में प्रवेश रोकने

वाले व्यक्ति को 8 माह की कैद या 500 रू0 जुर्माना या दोनों हो सकता है। धारा 4– इस धारा के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों के लिए निम्न प्रावधान किये गये है:

(क) किसी भी दुकान, जलपान गृह, होटल, सार्वजनिक मनोरंजन के स्थान में प्रवेश करने व धर्मशालाओं, मुसाफिर खानों के बर्तनों को या अन्य चीजों को व्यवहार में लाने की स्वतन्त्रता होगी। (ख) किसी भी पेसे, व्यापार या उद्योग को चुनने व उसे करने की स्वातन्त्रता होगी।

(ग) किसी भी नदी, कुएँ, तालाब, शमशान या कब्रिस्तान के स्थान को व्यवहार में लाने की स्वातन्त्रता होगी। (घ) साधारण जनता के लिए बनायी गयी धर्म संस्थाओं के लाभ एवं सेवाओं के उपयोग करने का पूर्ण अधिकार होगा। (ङ) किसी भी मुहल्लों में जमीन खरीदने, मकान, बनवाने और रहने की स्वतन्त्रता होगी। (च) किसी भी धर्मशाला, सराँय आदि का लाभ उठाने का पूर्ण अधिकार होगा। (छ) किसी भी सामाजिक या धार्मिक संस्कार एवं प्रथा को अपनाने की स्वातन्त्रता होगी। (ज) किसी भी प्रकार के जेवर या अन्य वस्तुओं को पहनने की स्वातन्त्रता होगी। धारा 5– इस धारा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी सार्वजनिक चिकित्सालय, औषधालय शिक्षा संस्था, छात्रावास में प्रवेश करने का अधिकार होगा और इन स्थानों पर प्रत्येक के साथ सामान्य व्यवहार किया जायेगा। धारा 6– इसमें अस्पृश्यता के आधार पर कोई भी दुकानदार किसी भी व्यक्ति को कोई भी वस्तु देखने या सेवा करने से इनकार नही कर सकता। धारा 7– के अनुसार अस्पृश्यता निवारण द्वारा मिले हुए अधिकारों का उपयोग करने में रूकावट डालने वाले को तथा अछूतों की सेवा करने वाले नाइयों आदि का अपमान करने वाले व्यक्ति को भी 6 माह की कैद तथा 500 रूपये जुर्माना देना होगा। धारा 8– के आधार पर यह व्यवस्था की गयी है कि धारा संख्या 6 का उल्लंघन करने वाले अपराधी का लाइसेन्स रद्द किया जा सकता है। धारा 9–यदि किसी सरकारी सहायता प्राप्त संस्थाओं के प्रबन्धक इस कानून के अन्तर्गत अपराधी सिद्ध हो गये हो तो उन संस्थाओं की सहायता बन्द कर दी जा सकती है। धारा 10– इसमें अस्पृश्यता सम्बन्धी अपराध के लिए किसी को प्रोत्साहित करने वाले व्यक्ति को उपर्युक्त दण्ड देने का विधान है। धारा 15– इसमें इस

अधिनियम के अधीन छूआ–छूत समाप्त करने के सरकारी नीति ने सभी राज्यों में एक सा स्वरूप ग्रहण कर लिया।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989: अनुसूचित जाति पर अत्याचार की बढ़ती प्रवृत्ति को देखते हुए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को, संरक्षण के तहत मौजूदा प्रावधान नागरिक अधिकार अधिनियम अपर्याप्त था। इसलिए नया कानून बनाना पड़ा। अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989, 30 जनवरी, 1990 से लागू हुआ। इसमें अत्याचार की श्रेणी में आने वाले अपराधों के उल्लेख के साथ–साथ उनके लिए कडे दण्ड की व्यवस्था की गई है जिसके अर्न्तगत व्यापक नियम भी बनाये गए। इसमें अन्य बातों के अतिरिक्त प्रभावित लोगों के लिए राहत और पुर्नवास की भी व्यवस्था है। राज्यों से कहा गया है कि वे इस तरह के अत्याचारों की रोकथाम के उपाय करे और पीड़ितों के आर्थिक तथा सामाजिक पुर्नवास की व्यवस्था करै। अरूणाचल प्रदेश और नागालैण्ड को छोड़कर अन्य सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में इस तरह के मामलों में इस कानून के तहत मुकदमा चलाने के लिए विशेष अदालते बनाई गई है। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियो के लोगों पर अत्याचारों की रोकथाम के कानून के तहत आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, तमिलनाडु और कर्नाटक में विशेष अदालते गठित की जा चुकी है। केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना के अन्तर्गत इस कानून को लागू करने पर आने वाले खर्च का आधा खर्च राज्य सरकारें और आधा केन्द्र सरकारें वहन करेंगी। केन्द्र शासित प्रदेशों को इसके लिए शत–प्रतिशत केन्द्रीय सहायता दी जाती है।

(3) अनुसूचित जातियों के आर्थिक विकास के लिए संवैधानिक आयोग

1. विशेष केंद्रीय सहायता (एससीए), जिसका उपयोग अनुसूचित जातियों के लिए उनके व्यावसायिक पैटर्न के संदर्भ में विकास कार्यक्रमों के संचालन में उत्पन्न व्यवधानों को निदान करना और निरन्तरता को बनाएं रखने का प्रयास किया जाता है और उनकी सीमित संपत्ति से आय की उत्पादकता बढ़ाने के लिए परिवार उन्मुख योजनाओं से सम्बंधित नीति निर्माण करना है। **2. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और**

अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम (NSFDC) की स्थापना 1989 में हुई थी, निगम का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के आर्थिक विकास को गति देना है, उनके व्यापार और उद्यमशीलता की क्षमताओं को बढ़ावा देना है, रियायती दरों पर सावधि ऋण मुहैया कराना है। NSFDC के अंतर्गत निम्नलिखित क्षेत्र योजनाएँ है– i) कृषि और संबद्ध क्षेत्र, ii) बागवानी, iii) पशुपालन और डेयरी विकास, iv) लघु सिंचाई, v) लघु उद्योग, vi) व्यापार और सेवाएँ और vii), परिवहन आदि। **3. अनुसूचित जाति विकास निगम (एससीडीसी):** अनुसूचित जाति विकास निगम को सहायता की योजना वर्ष 1978–79 में केंद्र प्रायोजित योजना के रूप में राज्य/संघ शासित प्रदेशों में शुरू की गईं।इनकी भूमिका गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली अनुसूचित जातियों के आर्थिक विकास के लिए धन जुटाना है।

निष्कर्ष:

इस तरह संवैधानिक प्रावधानों, विभिान्न नीतियों से स्वंत्रता के बाद दलितों में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विकास हो रहा है। स्वतंत्रता के बाद वैधानिक प्रावधानों के आधार पर दलितों के विकास अवसरों का बढ़ावा मिला है। जिसके आधार पर आधुनिक लोकतांत्रिक भारत में उनकी स्थिति सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्तर में सुधार की तरफ बढ़ रही है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था का आधार जाति पर केन्द्रित होकर जाति के द्वारा जो निर्योग्ताए है उन पर संवैधानिक प्रावधानों के द्वारा प्रतिबन्धित लगाया गया और जाति को ही आधार मानते हुए सामाजिक आर्थिक न्याय की पूर्ति के लिए आरक्षण जैसी व्यवस्था को लागू किया गया ताकि लोकतंत्र में सामाजिक न्याय और अवसर की समानता की पूर्ति हो सके। आरक्षण एक लोकतांत्रिक प्रणाली में मानवीय मूल्यों और सामाजिक विकास में सामान प्रतिनिधित्व का परिमाप है। इसका उदाहरण के तौर पे अनुसूचित जाति समूहों को जाति के आधार पर शिक्षा और व्यवसाय में आरक्षण दिया

गया है और परिणामस्वरूप उनमें सामाजिक–आर्थिक आधार पर हो रहे सुधार को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि आरक्षण प्रभावकारी साबित हुआ है।

सन्दर्भ–सूची

घुर्ये, जी. एस. (1932). *कास्ट एंड रेस इन इंड़िया,* पोपुलर पब्लिकेशन, बॉम्बे।

श्रीनिवास, एम.एन. (1966). *सोसल चेंज इन मोडर्न इण्डिया,* ओरिंट लागमैन, नई दिल्ली,

लिंच, ओ .एम.(1969). *द पॉलिटिक्स आफ अनटचबेलिटी,* कोलम्बिया युनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क।

बेते, आंद्रे (1971). *जाति वर्ग और शक्ति,* कैलिफोर्निया प्रेस विश्वविद्यालय, बर्कले।

श्रीनिवास,एम.एन. (1987).*द डोमिनेंट कास्ट एंड अदर एसेज,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

राम, नंदू (1988). *द मोबाइल शेड्यूल्ड कास्ट्सः राइज ऑफ ए न्यू मिडल क्लास,*

हिंदुस्तान प्रकाशन निगम, नई दिल्ली।

गुप्ता, दीपांकर (1991).*सोसल स्ट्रेटीफिकेशन,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस दिल्ली।

गुप्ता, दीपांकर (2000). *इन्टेरोगेटिंग कास्टः अंडरस्टैंडिंग हाईरारकी एंड इंडियन सोसाइटी,* पेगुइन बुक्स नई दिल्ली।

कुमार, विवेक (2001). *ग्लोबलाइजेशन एंड एम्पोवेर्मेंट ऑफ दलिट्स इन इंडिया,* इंडियन अन्थ्रोपोलोजिस्ट, खण्ड 31–2 ,पेज 15–26

हसन, जोया (2002). *राजनीतिक पार्टी एवं पार्टीया,* ऑक्सफोर्ड इंडिया पेपर्स।

शर्मा, के.एल. (2004), *सोशल स्ट्रैटीफिकेशन एंड मोबिलिटी,* रावत पब्लिकेशन जयपुर।

कुमार, विवेक (2005). भारतीय समाजशास्त्र में दलितों की स्थिति। भारतीय समाजशास्त्रीय पत्रिका नई दिल्ली।

थोरात, सुखदेव (2009). *भारत में दलितः एक सामान नियति की तलाश,* सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली।